इक्कीसवीं सदी में विज्ञान*

जयंत नार्लीकर

प्रोफेसर नार्लिकर अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त खगोल भौतिकविद् और विज्ञान लेखक हैं। उनकी अतिविशिष्ट उपलब्धियों के लिये उन्हें सन् 1965 में 27 वर्ष की उम्र में भारत के राष्ट्रपति द्वारा पदम्भूषण से अलंकृत किया गया। उनके निर्देशन में पुणे स्थित खगोल विज्ञान व खगोलभौतिकी के अन्तर्विश्वविद्यालय केन्द्र की स्थापना हुई। सम्प्रति वे इस संस्थान के संस्थापक निदेशक हैं।

1. स्थित्यंतर

"दीर्घकाल के पश्चात् आज हमें संसार में बड़े पैमाने पर द्वेष, पापाचरण, असत्य का बोलबाला आदि दुर्गुण दिखाई दे रहे हैं। लगता है भक्तिभाव नष्टप्राय है। सच्चाई और सादगी ये तो मजाक के विषय बन गये हैं। न्याय भी नाममात्र बचा है। सभी जगह घोटाले चल रहे हैं, समाज मानों किंकर्तव्य विमूढ़ हो गया है। योजना के अनुसार तो कुछ भी नहीं हो रहा....."

यह वक्तव्य किसने दिया, कब दिया, कहाँ दिया ? इस प्रश्न का उत्तर खोजने के लिये आपको चार सदियों पीछे चलना होगा। यद्यपि आप कहेंगे कि यह वर्णन वर्तमान में अच्छी तरह लागू होता है, तथापि यह बात कही थी लुई ले रॉय नामक फ्रांसीसी लेखक ने 1575 में अपनी पुस्तक Vicissitude (यानी 'स्थित्यंतर') में जो तत्कालीन यूरोप में काफी प्रचलित एवं चर्चित रही। तत्कालीन सामाजिक माहौल का उपरोक्त वर्णन उस समय भी उचित माना जाता था। इसके कारण विचारणीय हैं। संक्षेप में उनका विवरण इस प्रकार है। सोलहवीं सदी में चुंबक रूपी दिशादर्शक की खोज हो चुकी थी और उसका प्रचार बढ़ रहा था। नौकानयन की तकनीक सुधर रही थी जिसकी बदौलत समुद्री यात्राओं का विस्तार हो रहा था। नयी विचारधाराएँ आ रही थीं जिनका परम्परागत विचारधाराओं से संघर्ष हो रहा था। लंबे प्रवासों ने रोगों के प्रसार में भी हाथ बटाया था। गोला बारूद की खोजों ने युद्धों को अधिक विनाशकारी बनाया था। मुद्रण तकनीक ने नये विचारों को फैलाने में मदद की थी और इस वजह से भी प्रस्थापित विचारों के प्रति असुरक्षितता का वातावरण बनाया था।

जिसे आज Renaissance यानी नवनिर्मिती का युग कहा जाता है उस युग की वह शुरुआत थी। साहित्य, संगीत, कला, वास्तु के साथ साथ अब विज्ञान भी वह प्रभावशाली माध्यम के रूप में समाज के सामने आ रहा था। और इस नये प्रभाव का आकलन न होने की वजह से ले रॉय सदृश विचारक अपने को (और अपने समाज को) असुरक्षित महसूस कर रहे थे। आज के सिंहावलोकन में हम नवनिर्मिती काल को यूरोप का एक सुवर्ण युग मानते हैं। और ले रॉय वर्णित स्थित्यंतर को प्रसूति वेदना कहा जा सकता है।

आज मानव समाज 'विज्ञान युग' के माहौल में कुछ ऐसी ही असुरक्षिता महसूस कर रहा है। और इसकी चर्चा आज के

* भारतीय भाषा परिषद द्वारा आयोजित परिसंवाद के तत्वावधान में लिखित...

विचारकों ने जारी रखी है। इसके दो उदाहरण हम यहाँ प्रस्तुत करेंगे।

पहला उदाहरण है 1964 में कैलिफोर्निया इंस्टिट्यूट ऑफ टेक्नॉलजी में आयोजित एक वाद-विवाद का जहाँ मैं श्रोता के रूप में उपस्थित था। वाद-विवाद का विषय था "क्या विज्ञान गल्प भविष्यदर्शी होते हैं या समाज को झकझोरने वाले असंस्कृत माध्यम?" वैज्ञानिक फ्रेड हॉएल एवं विज्ञान गल्प लेखक रे ब्रॅड्ब्री इस अवसर पर मुख्य वक्ता के रूप में अपने विचार व्यक्त कर रहे थे।

यहाँ रे ब्रॅड्बरी ने एक मौके की बात कही। वे बोले "मेरा जन्म 1920 का है। तब से लेकर आजतक मैने अपने जीवन में विज्ञान के जो नये नये अनुसंधान आते देखे हैं उनसे मुझे यही लगता है कि जो बातें मेरे जन्म के समय विज्ञान गल्प में गिनी जाती थीं वे अब वास्तविकता का अंग बन गई हैं।" "यानी" आज का अच्छा विज्ञान गल्प कल का वास्तव बन जाता है और यह स्थित्यंतर इतनी शीघ्रता से हो सकता है कि उसकी प्रचीति मानव को अपने जीवन काल में ही मिल जाती है।

इस स्थित्यंतर का उदाहरण अब मेरे दूसरे उद्धरण में देखें। The Future Shock ("भविष्य का धक्का") नामक पुस्तक में लेखक आल्विन टॉफ्लर ने वैज्ञानिक अनुसंधानों के निरंतर बढ़ते वेग की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है। विज्ञान तथा तकनीक की शुरुआत धीरे धीरे हुई। लेकिन चक्रवृद्धि ब्याज की तरह यहाँ अब अधिकाधिक तीव्रता से नई नई बातों की, नये आविष्कारों की, नये अनुसंधानों की वृद्धि हो रही है। यदि हम आदिमानव काल से आजतक के लगभग 50,000 वर्षों के कालखंड को कोई 800 मानव जीवनियों में बांटे (यानी एक मानव जीवनी 625 वर्ष की हुई) तो इनमें से पहली 650 जीवनियाँ तो मानव ने गुफाओं में बिताई। लेखनकला जैसी संस्कृति के लिये आवश्यक कला का प्रयोग वह केवल पिछली 70 जीवनियों में करता आ रहा है। और मुद्रण कला तो पिछली 6-7 जीवनियों में ही। जिस बिजली पर हमारा आधुनिक जीवन इतना निर्भर है उसका प्रयोग तो पिछली 2 जीवनियों का ही। और अंतरिक्ष तकनीक, सूचना एवं कंप्यूटर की तकनीक तो पिछली एक जीवनी से भी कम समय से रही है।

इस बढ़ते वेग का प्रभाव जीवन स्तर पर, जीवन पद्धति पर, सामाजिक माहौल पर पड़े बिना नहीं रहता। यदि हम किसी बुफे डिनर पर जाएं जहाँ नई नई चीजें, पकवान परोसे जायें तो कौन सी वस्तु लें कौन छोड़ें इसका संभ्रम पैदा होता है। समाज की अवस्था कुछ ऐसी ही है। वह विज्ञान द्वारा परोसी गई नई नई तकनीकी खाद्यों के कारण चकरा सा गया है। इसी स्थित्यंतर की चर्चा हम इस लेख में कुछ विस्तार से करेंगे। आइये पहले देखें ऐसे कौन से पकवान आगे भविष्य में परोसे जाएंगे।

2. तकनीक की नई दिशाएं

बीसवीं सदी के आरंभिक काल में क्या कोई यह कल्पना कर सकता था कि इस शतक में अणु बम जैसे संहारक अस्त्र बनेंगे, मानव चाँद पर कदम रखेगा, कंप्यूटर जीवन के अनिवार्य अंग बन जाएंगे, या टेलिविजन, मोबाइल फोन आदि सूचना एवं प्रसारण के प्रभावी साधन के रूप में आएंगे ? तेजी से बढ़ते विज्ञान के प्रभाव का अनुमान, अपेक्षाएँ या आकांक्षाएँ वास्तव से कहीं नीचे ही रहेंगे। फिर भी भविष्यवेध एक महत्वपूर्ण प्रयत्न है समाज को भविष्य के प्रति चौकन्ना बनाने

का। अब हम यहाँ ऐसे ही भविष्य वेधों का सहारा लेंगे।

(1) आज के माहौल में सबसे प्रभावशाली साबित हुआ है, कम्प्यूटर। मूर का नियम कि कंप्यूटर की गणन क्षमता हर डेढ़ साल में दुगुनी होती है, अब तक सही साबित हुआ है। 1950 के मुकाबले में आज के कंप्यूटर दस अरब गुने शक्तिशाली हैं। साथ ही घन पदार्थों के विज्ञान ने इनको छोटा छोटा करके विशाल हॉल के आकार से अब हथेली में समा दिया। उनके मूल्य भी घटते जा रहे हैं। यह कोई अचरज की बात नहीं होगी कि 20-25 वर्षों में मेज पर रखे कंप्यूटर की क्षमता आज भारत भर के तमाम कंप्यूटरों के समुदाय से कहीं अधिक हो। या जिस 'क्रे' सुपर कंप्यूटर के इस्तेमाल पर अमेरिका पाबंदियाँ लगा रहा था, वैसे कंप्यूटर बच्चों के खेलों में दिखाई दें।

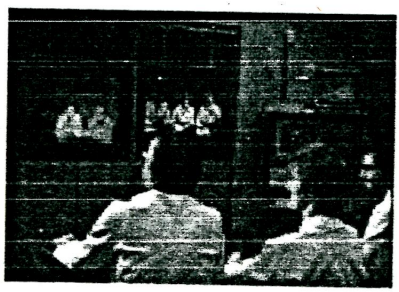

(2) मोबाइल की तकनीक कंप्यूटर के साथ जुड़कर सूचना एवं जानकारी के आदान प्रदान में नये रूप धारण करेगी। कमीज के पॉकिट में रखा 'टॅब' एक फोन के रूप में धारक को पूरे विश्व के संपर्क में रख सकेगा। इस पर ग्रंथालय में समाहित जानकारी मिल सकैगी। इससे बड़ा 'बोर्ड' दीवाल पर लटकाया जा सकता है और टेलिविजन, टेली कॉन्फरेंसिंग आदि के लिये काम में लाया जा सकेगा। टॅब एवं बोर्ड के बीच 'पॅड' कागज जैसा पतला लेकिन अथाह जानकारी से भरा! इसमें कंप्यूटर के गुण होंगे।

(3) बीसवें शतक को इलेक्ट्रॉनिक्स ने जैसा प्रभावित किया वैसे ही इक्कीसवें शतक में फोटॉनिक्स का राज चलेगा। हर सेकेंड में 50 गिगाबिट जानकारी प्रसारित करने के लिये फोटॉन यानी प्रकाशकण ही इलेक्ट्रॉन के मुकाबले अधकि योग्य साबित होंगे। इनकी शक्ति बढ़ाने के लिये ऑप्टिकल एम्प्लिफायर (प्रकाश वर्धक) बनाने के प्रयास चल रहे हैं। एक वेव्ह लेंथ के प्रकाश पर लेसर की प्रति सेकेंड सहस्र अब्ज स्पंदनों को ले जाने की क्षमता हासिल होने पर इंटरनेट सदृश जानकारी प्रसारक-माध्यम आज की तुलना में बहुत ही कार्यक्षम बनेंगे। यानी 'इन्फर्मेशन हाइवे' के रूप में क्रांति होगी।

(4) जानकारी के क्षेत्र में सेलुलर फोन, उपग्रह यंत्रण आदि आज के मुकाबले अधिक व्यापक बनेंगे। उच्च फ्रीक्वेंसी पर अधिक जानकारी भेजी जा सकती है, यदि भेजने की कठिन तकनीक हासिल हो तो। उस दिशा में काफी उन्नति हो चुकी है और 30 गिगा हर्ट्ज तक यह तकनीक पहुँचने की आशा है। डिश ॲण्टेना की जगह अधिक कार्यक्षम फेज़्ड अरे ॲण्टेना दिखाई देंगे।

(5) यातायात के साधनों में, चुंबकीय क्षेत्र द्वारा उठाई गई हवा में चलने वाली रेलगाड़ियाँ 500 किलोमीटर प्रति घंटा चाल हासिल कर देंगी। ऐसी गाड़ी हमें मुंबई से दिल्ली महज तीन घंटों के भीतर पहुँचा देगी। यह भी संभव है कि यह चाल बढाकर प्रति घंटा 2000 कि0 मी0 तक पहुँच जाय। ऐसी

हालत में इन गाड़ियों को बिना किसी धक्के से चलाने के लिये समुद्र के भीतर खास सुरंगें बनानी होंगी। लंन्दन से न्यूयॉर्क तक की यात्रा ऐसी गाड़ियाँ तीन घंटे में पूरी कर पाएंगी। उधर हवाई जहाज भी 800-1000 यात्रियों को ध्वनि के वेग के

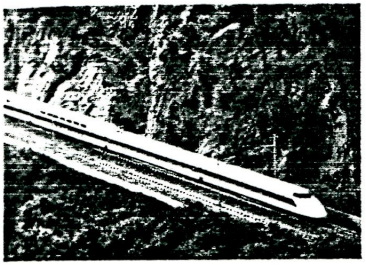

तिगुने वेग से ले जा पाएंगे। और मोटरगाड़ियाँ अधिक 'यूज़र फ्रेड्ली' बनेंगी जो कंप्यूटराइज्ड डॅश बोर्ड पर गन्तव्य स्थान बताने पर सही रास्ते पर स्वयंचलित एवं सुरक्षित ढंग से वहाँ पहुँचा देंगी।

(6) लेकिन ऐसे यात्रा के साधन अधिकाधिक 'टूरिज्म' के लिये काम आएंगे। अपने प्रति दिन के कारोबार में घर से ऑफिस जाने की दौड़धूप धीरे धीरे अनावश्यक बनती जाएगी, क्योंकि हर व्यक्ति घर से ही काम करेगा। फाइलें दफ्तर में न रह कर घर के कंप्यूटर में रहेंगी। बच्चे भी स्कूल की पढ़ाई विशाल टी0 वी0 के पर्दे पर घर से ही कर सकेंगे। यह कोई अचरज की बात नहीं होगी यदि ऐसी स्थिति सन् 2020 तक ही आ जाए।

(7) हमें चोट लगती है तो थोड़े उपचार के बाद हमारा शरीर पुनर्निर्माण के द्वारा शारीरिक चोटों को ठीक कर देता है। हड्डियाँ टूटने पर भी फिर जुड़ जाती हैं। या सिर फटने पर भी पूर्ववत हो जाता है। क्या यह प्रवृत्ति यंत्र निर्मित निर्जीव वस्तुओं में भी लाई जा सकती है। प्राकृतिक प्रवृत्तियों की ऐसी नकल संभव है कुछ ही वर्षों में वह वास्तव बन सके। क्योंकि इस दिशा में अनुसंधान चल रहे हैं।

(8) उसी तरह 'बुद्धिमान' वस्तुओं के निर्माण भी दूर नहीं। आप सीढ़ी पर चढ़ रहे हैं. यदि काफी बोझ लेकर चढ़ रहे हों तो सीढ़ी आप को बता देगी, मत चढ़िये यह बोझ मुझसे सहा नहीं जाएगा-मैं टूट जाउंगी। भूचाल के समय इमारतें स्वयं ही अपनी शक्ति बढ़ाकर भूचाल निर्मित धक्कों एवं तनावों को सह लेंगी। उसी तरह कुछ वस्तुएँ "अब हमारी आयु बढ़ चली हमें अब रिटायर कर दें", यह सूचना अपने मालिक को स्वयं देंगी। इस तरह पुराने कमजोर पुल गिरने से पहले उनका इस्तेमाल बंद हो जाएगा।

(9) जैसे जैसे मानव जीवन का यंत्रावलंबन बढ़ता जाएगा वैसे वैसे उस स्तर को बनाए रखने के लिये अधिकाधिक ऊर्जा की आवश्यकता महसूस होगी। सन्1850 तक मानव की ऊर्जा खर्च करने की क्षमता प्रति शतक 16.5 अरब टन कोयला जलाने के बराबर थी। 1850 से आगे यह व्यय दुगुनी चाल से होने लगा क्योंकि अब औद्योगिक क्रांति पनपने लगी थी। दूसरे महायुद्ध के उपरांत इसमें और दस गुना उछाल आया। यानी पिछले 2000 वर्षों में मानव ने जितनी ऊर्जा खरची उसका आधा भाग बीसवीं सदी में ही खरचा ! और अब इक्कीसवीं सदी में यह व्यय और भी बढ़ेगा। तो यह ऊर्जा आएगी कहाँ से। सूरज से मिलने वाली ऊर्जा बड़े पैमाने पर अंतरिक्ष में विशाल अंतर्वक्र शीशों द्वारा केंद्रित कर भूतल पर पहुँचाने की योजना अभी कागज पर है। न्यूक्लीय फ्यूजन पर प्रयोग चल रहे हैं पर अभी ऐसी क्रिया संतुलित ढंग से कार्यान्वित नहीं हो पाई है। पर हमें यह आशा करनी चाहिये

कि ये दोनों मार्ग निकट भविष्य में (अर्थात् दो-तीन दशकों में) उपलब्ध होंगे, अन्यथा ऊर्जा संकट का और कोई हल संभव नहीं।

(10) यदि बीसवीं शती पदार्थ विज्ञान की थी तो अब विद्यमान शती जीव विज्ञान की साबित होगी। इसके आसाद अभी मिलने

लगे हैं। मानव जीनॉम परियोजना अब पूरी हो रही है जिसके आधार पर मानव शरीर के सभी लगभग एक लाख जीन का नक्शा बनाया जा सकता है। इससे कई आशा आकांक्षाएं की जाती हैं। जैसे 'कन्स्ट्रक्शन मॅन्युअल' के मिलने पर मिस्त्री किसी भी यंत्र के बिगड़ने के कारण जान सकता है वैसे ही अब मानव शरीर की आंतरिक जानकारी रोगों के इलाज के लिये फलदायी होगी। एड्स कॅन्सर आदि असाध्य माने जाने वाले रोगों पर विजय पाने की आशाएं बढ़ गई हैं। यह भी माना जाता है कि अगले दो तीन दशकों के भीतर ऐसा समय आयेगा कि कोई भी व्यक्ति दवाइयों की दूकान में कुछ टेस्ट करवाकर अपने शरीर की 'रचना-पुस्तिका' एक सी-डी रॉम के ऊपर अंकित कर ले जा सकेगा।

3. कुछ चिंता के विषय

किसी भी स्थित्यंतर के कारण, खासकर यदि वह तेजी से आए, समाज की आंतरिक व्यवस्था, उसका संतुलन बिगड़ सकता है। समाज धुरीणों के सामने कुछ यक्षप्रश्न आ जाते हैं। यदि हिम्मत और समझदारी से निर्णय न लिये जाँय तो आगे पछताने का समय आ सकता है। अब देखते हैं कि अभी बताए नये अनुसंधानों को पचाने के लिये क्या समझदारियाँ बरतनी पड़ेंगी।

(1) पर्यावरण की रक्षा: ओज़ोन वायु की सतह हमारे वायुमंडल में होने की वजह से हम सूरज की अतिनील किरणों से बच पाते हैं। पर मानव निर्मित उपकरणों से निकलने वाले फ्लोरोक्लोरो कार्बनिक पदार्थों ने ऊपर जाकर ओज़ोन को खतरे में डाल दिया है। ऐसे उद्रेकों पर प्रतिबंध लगाना असंभव नहीं। पर स्वार्थवशात् अमेरिका जैसा सघन देश, जो ऐसे उद्रेकों के लिये सर्वाधिक जिम्मेदार है, ये आत्मनियंत्रण नहीं बरतना चाहता। ओजोन का प्रश्न पर्यावरण के खतरों में से एक है। अन्य काफी खतरे हैं जो पर्यावरण के बिगड़ते संतुलन के लिये एवं उसके मानव के स्वास्थ्य पर होने वाले दुष्परिणामों के लिये जिम्मेदार हैं।

(2) मानव जीनॉम परियोजना के साथ साथ अन्य कई संभावनाएँ सामने आई हैं। क्लोनिंग यानी किसी जीव की प्रतिकृति निर्माण करना 'डॉली' नामक भेड़ के उदाहरण ने वास्तविक रूप में प्रदर्शित किया। क्लोनिंग के फायदे हैं लेकिन इस प्रयोग के

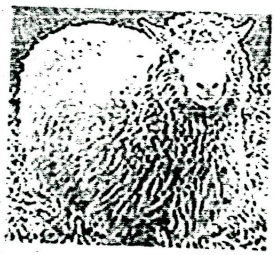

बुरे परिणाम भी हो सकते हैं। जिस तरह जीव शास्त्र के इस्तेमाल से जैविक अस्त्रों की बुनियाद पड़ी वैसे ही क्लोनिंग से वंशवाद के दुष्परिणाम बढ़ जायेंगे। किसी एक जाति को निर्मूल कर देना (जैसा जर्मनी के तानाशाह ऑडॉल्फ हिट्लर ने किया था) जैविक अनुसंधानों के माध्यम से संभव होगा।

(3) अधिकाधिक यंत्रावलंबन के कारण शारीरिक मेहनत कम हो रही है। क्या मानव प्रकृति से अधिकाधिक दूर जाते जाते अपनी तंदुरुस्ती खो बैठेगा और केवल शारीरिक ही नहीं मानसिक स्वास्थ्य भी। क्योंकि कम समय में (यंत्रों के माध्यम से) अपना काम पूरा करने के पश्चात् उसके सामने सवाल खड़ा होगा कि खाली समय का उपयोग कैसे करें संस्कृत श्लोक बताता है:-

काव्य शास्त्र विनोदेन कालो गच्छति धीमताम् ।
व्यसनेन तु मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा ।।

अभी से हम देखते हैं कि तथाकथित विकसित देशों में व्यसनाधीनता बढ़ रही है, पारिवारिक जीवन नष्टप्राय हो गया है और छोटे झगड़ों का रूपांतर खूनखराबे में होता है।

(4) शायद सर्वाधिक खतरा हम सभी को समाप्त करने की क्षमता रखने वाला, मौजूद है न्यूक्लीय अस्त्रों के ढेर में। इस समय ऐसे अस्त्रों की सामूहिक क्षमता संसार की समूची जीवसृष्टि

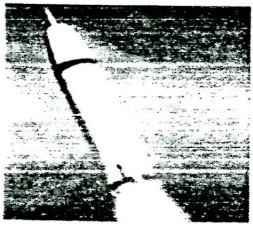

को तहस नहस करने में जरूरत से कई गुनी हो चुकी है। और आगे की तकनीक इस क्षमता को बढ़ाती जाएगी। इसीलिये यह अत्यावश्यक है कि संसार के सभी देश मिलकर इस ढेर को नाकाम करें और नये अस्त्रों के निर्माण पर सार्वत्रिक पाबंदी जाहिर करें।

4. समाज और विज्ञान का पारस्परिक संबंध

इस पार्श्वभूमि पर समाज अपने सामूहिक रूप में विज्ञान पर क्या प्रभाव डाल सकता है? क्या वह ऐसे कदम उठा सकता है जो विज्ञान के भविष्य के रूप को, उसकी उन्नति की दिशा को निश्चित करें? आइये कुछ उदाहरण देखें।

(1) जैसा हम अभी देख चुके हैं, जीव विज्ञान ऐसे मोड़ पर आ पहुँचा है कि उसकी भविष्य की दिशा निश्चित करने की जिम्मेदारी समाज को उठानी पड़ेगी। क्योंकि प्राकृतिक क्रियाओं से दूर जाकर प्राणि तथा वनस्पति जीवन से छेड़-छाड़ करना अब संभव है। क्या क्लोनिंग पर प्रतिबंध आवश्यक है? क्या नये प्रकार के जीव बनाए जाएँ ? बायोटेक्नालॉजी सामान्य भौतिक या रासायनिक तकनीकों से कुछ भिन्न है। कुछ मामलों में अधिक प्रभावक्षम, कम खर्चीली तथा पर्यावरण से नरमाई से पेश आने वाली अवश्य है। लेकिन इसके बुरे परिणाम भी बहुत सारे हैं। खासकर कुछ प्रयोगों के जो प्राकृतिक जैविक क्रियाओं में परिवर्तन करते हैं, दूरगामी परिणाम क्या होंगे यह कोई नहीं बता सकता। ऐसे अज्ञातों के प्रति समाज को सावधानी बरतनी होगी।

(2) यह तो सभी मानेंगे कि किसी भी नई खोज के लिये उसके जनक को पूरा श्रेय मिलना चाहिये। लेकिन विज्ञान का यह भी तत्व रहा है कि नई खोजें, खासकर ऐसी जिनका समाज के लिये कल्याणकारी प्रभाव साबित हो चुका है, जन सामान्य तक पहुँचें। निजी स्वार्थ के लिये उन्हें कुछ इने गिने लोगों तक सीमित रखना उचित नहीं। ऐसे समय में समाज को

न्यायपूर्ण निर्णय लेने होंगे। उदाहरण के लिये कुछ असाध्य माने जाने वाले रोगों पर इलाज करने वाली दवाइयाँ सभी को उपलब्ध होनी चाहिये। केवल कुछ लोगों या कंपनियों को इन्हें बनाने का अधिकार हो तो यह देखना आवश्यक है कि वे इसका अनुचित लाभ न उठाएँ। विज्ञान के शोधकार्य को जारी रखना, उसे पर्याप्त आर्थिक सहायता देना, जैसा समाज का कर्तव्य बनता है वैसे ही समाज को ये भी जिम्मेदारी निभानी पड़ेगी कि यह शोध ऐसी दिशा में न बढ़े जिससे आगे समाज को पछताना पड़े। परमाणु बम की खोज एक ऐसा उदाहरण है।

(3) औद्योगिक क्रांति के पश्चात् मानवीय तकनीक में यह क्षमता आई कि वह पर्यावरण पर प्रभाव डाल सके। मोटरकार की खोज के बाद जैसे जैसे उनका प्रयोग बढ़ता गया, नगरीय पर्यावरण दूषित होता गया। 1970 के आस पास लॉस एंजेलिस शहर का वातावरण इतना दूषित हुआ कि पेट्रोल के धुएँ पर नये प्रतिबंध लगाने पड़े। इस सदी के प्रारंभ में दिल्ली शहर को इसी अनुभव का सामना करना पड़ा। ऐसे प्रतिबंध अधिकतर लोगों को अच्छे नहीं लगते। लेकिन स्वास्थ्य की दृष्टि से एवं सामाजिक दृष्टिकोण को सामने रखकर इनका पालन आवश्यक है।

(4) जैसे जैसे सूचना तकनीक पनपती जाती है इस बात की जिम्मेदारी समाज की ही है कि बढ़ती जानकारी का दुरुपयोग व्यक्ति स्वातंत्र्य को दबाने में न हो। फोनटेपिंग, गुप्त रूप से विडिओ रिकार्डिंग, गलत अफवाएँ फैलाना ये सब ऐसे दुरुपयोगों के उदाहरण हो सकते हैं। कुछ साल पहले 'गणेशजी दूध पी रहे हैं' यह समाचार तेजी से संसार के कोने कोने तक फैला। यहाँ चमत्कार गणेशजी के दूध पीने का नहीं था। इसकी कारण मीमांसा विज्ञान द्वारा की गई। चमत्कार था, कितनी शीघ्रता से यह समाचार फैला। ऐसी अफवाओं पर काबू पाना, सच्चा समाचार प्रसारित करना, चमत्कारों को विज्ञान द्वारा हल करना ये समाज के ही कर्तव्य हैं।

(5) इक्कीसवीं सदी में अब ऐसा माहौल धीरे धीरे आयेगा जिसमें राष्ट्रीय सीमाएँ धूसर होती जाएँगी और "वसुधैव कुटुंबकम्" का वातावरण निर्माण होगा। व्यापार, कामधंधे, शिक्षा, खेल आदि में ऐसी सीमाएँ कम हो चुकी हैं। अभी राजनीतिक प्रश्न इसके आड़े आते रहते हैं। लेकिन आपसी झगड़ों में धन, समय, मानव संसाधन आदि का व्यय यदि घटे तो निश्चित रूप से पृथ्वी पर मानव जीवन स्तर उभर उठेगा। इस उद्देश्य के लिये विज्ञान तथा तकनीक प्रभावी अस्त्र हैं बशर्ते समाज उनका बुद्धिमानी से इस्तेमाल करे।

(6) यह 'बुद्धिमानी' समाज में कैसे आयेगी शिक्षा प्रसार इसका एक माध्यम है। लेकिन साथ ही वैज्ञानिक दृष्टिकोण का प्रसार भी उतना ही आवश्यक है। जहाँ विज्ञान एवं जानकारी बढ़ती जा रही है वहीं तथाकथित विज्ञान, तथाकथित चमत्कार इनके पीछे भी काफी लोग भागते नजर आते हैं। वैज्ञानिक दृष्टिकोण हमें नीरक्षीर भेद करना सिखाता है। यद्यपि यह दृष्टिकोण विज्ञान के विकास में सामने आया तो भी इसका प्रभाव सामान्य जीवन में भी है। सारांश में, विज्ञान तकनीक के विकास ने समाज के सामने नई चुनौतियाँ रखी हैं। क्या तकनीक के कारण बदलते माहौल में बिना चकराए मानव आगे बढ़ सकेगा उसके लिये उसे वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनाना पड़ेगा।

अब हम इस प्रश्न पर दूसरी दिशा से विचार करेंगे। विज्ञान समाज के लिए कहाँ तक लाभदायी सिद्ध होगा ? क्या इसे 'भूल जाना' समाज के लिये बेहतर होगा ? कुछ लोगों का

कहना है इतने पेचीदा प्रश्न समाज के सम्मुख रखने वाला यह विज्ञान हमें सुखकर साबित नहीं हुआ। अत: इसे धीरे धीरे 'बंद' करके औद्योगिक क्रांति के पूर्व के सादगीपूर्ण जीवन को अपनाना बेहतर होगा।

ऐसा दृष्टिकोण वास्तविकता से कोई नाता नहीं रखता। सर्वप्रथम यह विवाद का विषय है कि औद्योगिक क्रांति के पूर्व का जीवन आज के जीवन से अधिक सुखी था। उस समय अनेक रोग असाध्य माने जाते थे। मानव की औसत आयु बहुत ही कम थी क्योंकि प्रसूति के समय मृत्यु (बच्चा और माता दोनों का) बड़े पैमाने पर हुआ करती थी और जो इससे बचते थे उन शिशुओं का लंबे समय तक जीवित रहना इन असाध्य प्राय रोगों के मुकाबले में असंभव माना जाता था।

जन जीवन तथा शिक्षा का स्तर, आज के मुकाबले बहुत निचला था। देहातों में आज बिजली पहुँच चुकी है। उस समय तो बिजली का नामोनिशान तक नहीं था। खेती के आज के उपकरणों, खाद के विभिन्न रूपों, मौसम की जानकारी के साधनों आदि के कारण आज के किसान की अवस्था भले ही आदर्श न हो तो भी दो सौ साल पहले के किसानों से कहीं बेहतर है।

एक समय था जब दक्षिण भारत के वृद्धावस्था के निकट पहुँचे लोग काशी यात्रा के लिये घर से निकलते थे तो परिवार वालों से आखिरी विदा लेते थे क्योंकि विकट यात्रा से बचकर लौटने की संभावना कम थी। ठग, लूटमार, जाड़ा और गर्मी की तीव्रता, सुगम रास्तों का अभाव, रोगों का फैलना, यातायात के साधनों की कमी आदि अनेक कारण थे जिनकी वजह से लंबी यात्राएं स्वर्गयात्रा में बदल जाती थीं।

नहीं ! यह मैं स्वीकार नहीं कर सकता कि विज्ञान के जीवन में पदार्पण से उसका स्तर गिरता जा रहा है। आज घड़ी को उलटा घुमाकर उस धूसर से सादगीपूर्ण जीवन की ओर लौटना संभव नहीं।

उल्टे विज्ञान रूपी साधन की महत्ता को पहचानकर उसे होशियारी से कार्यान्वित करने वाले समाज ही आगे बढ़ पाएंगे। 'होशियारी' का अर्थ अभी चर्चित जटिल समस्याओं को सुलझाकर आगे बढ़ना। विज्ञान जनित तकनीक इस्तेमाल करते समय उसके शीघ्र तथा दूरगामी लाभों और दुष्परिणामों को समझना आवश्यक है। दूरदृष्टि से अपनाए गये वैज्ञानिक अनुसंधान समाज के लिये लाभदायी सिद्ध होंगे।

हाँ एक बात हम पूर्व परंपराओं से सीख सकते हैं। वह है यंत्र युग में मनुष्य की मानवता की कद्र करना। मानव-मानव के व्यवहार में जो 'आदमीयत' पहले थी, उसे हम आज भूलते जा रहे हैं। इसीलिये 'परिवार' नामक संस्था को पुनर्जीवित करना आवश्यक है। प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी समाज का घटक होता है। सामाजिक जीवन में कुछ मदों पर व्यक्तिगत स्वार्थ को सामाजिक हितों के आगे छोड़ देना आवश्यक होता है। क्योंकि ऐसे भी समय आते हैं जब व्यक्तिगत कठिनाई पर विजय पाने के लिये सामाजिक सहायता महत्वपूर्ण बनती है। ऐसे समाज जहाँ प्रत्येक सदस्य केवल अपनी ही सोचता है, धीरे धीरे भग्न होते जाते हैं।

बीसवीं शती में आरंभित स्थित्यंतर अब ज़ोर पकड़ रहा है। जब हवा तेज़ बहती है तो उसे डरकर अपने आपको घर में बंद करना एक पर्याय है। उस तेज़ हवा की ऊर्जा इस्तेमाल कर अपनी समस्याएँ सुलझाना दूसरा पर्याय है। विज्ञान की तेज हवा को काबू में लाकर उससे अपना जीवन सुखी बनाना हमारा उद्देश्य होना चाहिये।